

श्रीमद्भागवतम् स्कन्ध 4 अध्याय 13: राजा अंग

21 September 2026



पाठ से पहले एक निवेदन

श्रीमद्भागवत महापुराण के ये अध्यायवार सार गीता प्रेस भागवत को मुख्य आधार मानकर तैयार किए गए हैं। ये भागवत के अध्ययन में सहायक हैं, मूल ग्रंथ का स्थान नहीं ले सकते।

अध्ययन का मुख्य और अनुशंसित मार्ग गीता प्रेस की भागवत पुस्तक से सीधा पाठ है। यात्रा में, घर से दूर, या जब पुस्तक पास न हो, तब निरंतर अध्ययन, पुनरावृत्ति और समझ के लिए इन सारों का सहारा लिया जा सकता है।



अपने पुत्र की क्रूरता से हृदय टूटा और प्रत्येक आसक्ति से मुक्त, साधु राजा अंग गहन रात्रि में उठते हैं और अपने महल से अकेले चुपचाप निकल जाते हैं, अपना सिंहासन तथा सोता हुआ परिवार पीछे छोड़ते हुए।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

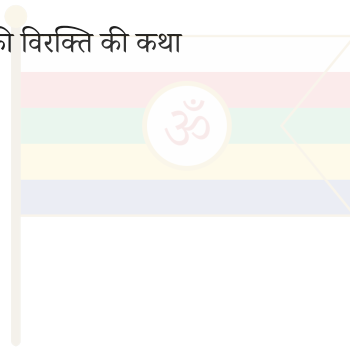
ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम में आपका स्वागत है — श्रीमद्भागवत महापुराण की पावन कथाओं और शिक्षाओं की एक भक्तिपूर्ण यात्रा। ध्रुव के अपने ही शरीर से भगवान् के नित्य धाम को प्रस्थान की कथा सुनकर, विदुर की परम के प्रति भक्ति और भी गहरी हो जाती है, और वे महर्षि मैत्रेय से ध्रुव के वंश की कथा जारी रखने को कहते हैं। यह त्रयोदश अध्याय उस राजवंश को कई पीढ़ियों तक अनुगमन करता है और फिर एक मार्मिक

कथा पर ठहरता है — राजा अंग की कथा, एक साधु तथा संयमी शासक जो, यद्यपि हर प्रकार से धर्ममय, एक दुष्ट पुत्र, वेन, से अभिशप्त थे। यह एक सज्जन के शोक के रहस्य का, उस पिता की पीड़ा का जिसका पुत्र सुधरता नहीं, और एक ऐसी विरक्ति का अध्याय है जो विफलता से नहीं बल्कि एक विचित्र, कठोर स्वतन्त्रता से उपजी। अंग के मध्यरात्रि-प्रस्थान में भागवत मौन रूप से पूछता है कि हमें सचमुच संसार से क्या बाँधता है, और जब कुछ और काम न आए तब उन बन्धनों को क्या ढीला कर सकता है।

अध्याय की जानकारी

- शास्त्र: श्रीमद्भागवत महापुराण
- स्कन्ध: 4 (चतुर्थ स्कन्ध)
- अध्याय: 13 (त्रयोदश अध्याय)
- अध्याय का शीर्षक: ध्रुव का वंश तथा राजा अंग की कथा
- मुख्य वक्ता: महर्षि मैत्रेय, विदुर को अपने उपदेश की निरन्तरता में (सूत की बाह्य कथा के भीतर)
- मुख्य श्रोता: विदुर
- मुख्य स्थल: ध्रुव का राजवंश, तथा साधु राजा अंग का राज्य
- केन्द्रीय विषय: ध्रुव के वंशज, तथा राजा अंग, उनके दुष्ट पुत्र वेन, तथा उनकी विरक्ति की कथा
- मुख्य श्लोक-सीमा: स्कन्ध 4, अध्याय 13, श्लोक 1-49
- मूल संस्करण: गीता प्रेस श्रीमद्भागवत महापुराण



पिछले अध्याय का सन्दर्भ

अध्याय 12 ने ध्रुव की कथा को उसके भगवान् विष्णु के अविनाशी धाम को सशरीर प्रस्थान के साथ पूर्ण किया, और नारद ने उसकी महिमा गाई। यह त्रयोदश अध्याय तब आरम्भ होता है जब विदुर, उस वृत्तान्त से हृदय कोमल तथा भक्ति गहरी होकर, मैत्रेय से जारी रखने को कहते हैं — और ऋषि ध्रुव के वंशजों की कथा उठाते हैं।

विदुर की गहरी हुई भक्ति

ध्रुव के भगवान् के धाम को प्रस्थान का वृत्तान्त सुनकर, विदुर का उस परम भगवान् के प्रति प्रेम और भी गहरा हो गया, और वे पुनः मैत्रेय से प्रश्न करने लगे, यह सुनने को उत्सुक कि उस महान् भक्त का वंश कैसे आगे बढ़ा।

सूत उवाच

निशम्य कौषारविणोपवर्णितं

ध्रुवस्य वैकुण्ठपदाधिरोहणम् ।

प्ररूढभावो भगवत्यधोक्षजे

प्रष्टुं पुनस्तं विदुरः प्रचक्रमे ॥ १ ॥

*sūta uvāca niśamya kauśāraviṇopavarṇitaṁ dhruvasya vaikuṇṭha-padādhirohaṇam prarūḍha-
bhāvo bhagavaty adhokṣaje praṣṭum punas taṁ vidurāḥ pracakrame*

अर्थ: सूत ने कहा: मैत्रेय से ध्रुव के वैकुण्ठ-धाम को प्रस्थान का वृत्तान्त सुनकर, विदुर — उस परम भगवान् के प्रति भक्ति गहरी होकर — पुनः उनसे प्रश्न करने लगे। (स्कन्ध 4, अध्याय 13, श्लोक 1)

तब मैत्रेय ने ध्रुव के वंशजों को पीढ़ियों तक अनुगमन किया। ध्रुव का पुत्र उत्कल आत्मा में इतना लीन था कि उसे किसी सिंहासन की परवाह न थी और संसार ने उसे जड़ समझा; अतः राज्य उसके भ्राता के वंश को गया, और उस वंश से, कई पीढ़ियों के राजाओं के बाद, समय पर धर्ममय शासक अंग आए।



ध्रुव के श्रेष्ठ वंश से समय पर साधु राजा अंग आए — संयमी, ब्राह्मणों के प्रति समर्पित, तथा अपनी प्रजा के प्रिय — फिर भी एक कठोर शोक के लिए नियत (श्लोक 18-

21)।

एक दुष्ट पुत्र की पहेली

मैत्रेय ने पहले परिणाम संक्षेप में बताया: कि अंग का पुत्र वेन इतना दुष्ट होगा कि क्रुद्ध ऋषि उसे मृत्यु का शाप देंगे; कि अराजकता फैलेगी; और कि वेन के शरीर के मन्थन से भगवान् अंशरूप में राजा पृथु के रूप में अवतरित होंगे, प्रथम महान् सम्राट्। यह सुनकर विदुर विस्मित हुए: भला ऐसे निर्दोष चरित्र वाले, ब्राह्मणों के अत्यन्त प्रिय राजा को इतना दुष्ट पुत्र कैसे मिला कि वे खिन्न होकर चले गए?

विदुर उवाच

तस्य शीलनिधेः साधोर्ब्रह्मण्यस्य महात्मनः ।

राज्ञः कथमभूद्दुष्टा प्रजा यद्विमना ययौ ॥ २१ ॥

*vidura uvāca tasya śīla-nidheḥ sādhor brahmaṇyasya mahātmanaḥ rājñāḥ katham abhūd duṣṭā
prajā yad-vimanā yayau*

अर्थ: विदुर ने पूछा: इतने साधु तथा महात्मा राजा के — सुशील के भण्डार, ब्राह्मणों के प्रति समर्पित — कैसे इतनी दुष्ट सन्तान हुई, जिसके कारण खिन्न होकर वे चले गए? (स्कन्ध 4, अध्याय 13, श्लोक 21)

यज्ञ तथा वेन का जन्म

उत्तर में, मैत्रेय ने कथा खोली। राजा अंग, धर्ममय किन्तु उत्तराधिकारी-रहित, ने एक बार एक महान् अश्वमेध यज्ञ किया; फिर भी देवगण अपने भाग ग्रहण करने नहीं आए। पूछे जाने पर, ऋत्विजों ने बताया कि यह राजा के अपने भाग्य का फल है — वह इस जीवन में पुत्रहीन रहने को नियत है।

किन्तु ऋत्विजों ने इससे भी गहरी बात कही — प्रत्येक यज्ञ के पीछे का रहस्य: यज्ञ में वास्तव में हरि की ही पूजा होती है, और देवगण तो केवल उनके साथ आने के कारण ही अपना भाग पाते हैं। उन्होंने कहा कि यदि राजा पुत्र के लिए साक्षात् भगवान् की आराधना करें, तो प्रत्येक आत्मा को उसकी पूजा जिस देवता तक वास्तव में पहुँचती है, उसी के अनुसार फल मिलता है (श्लोक 32-34)।

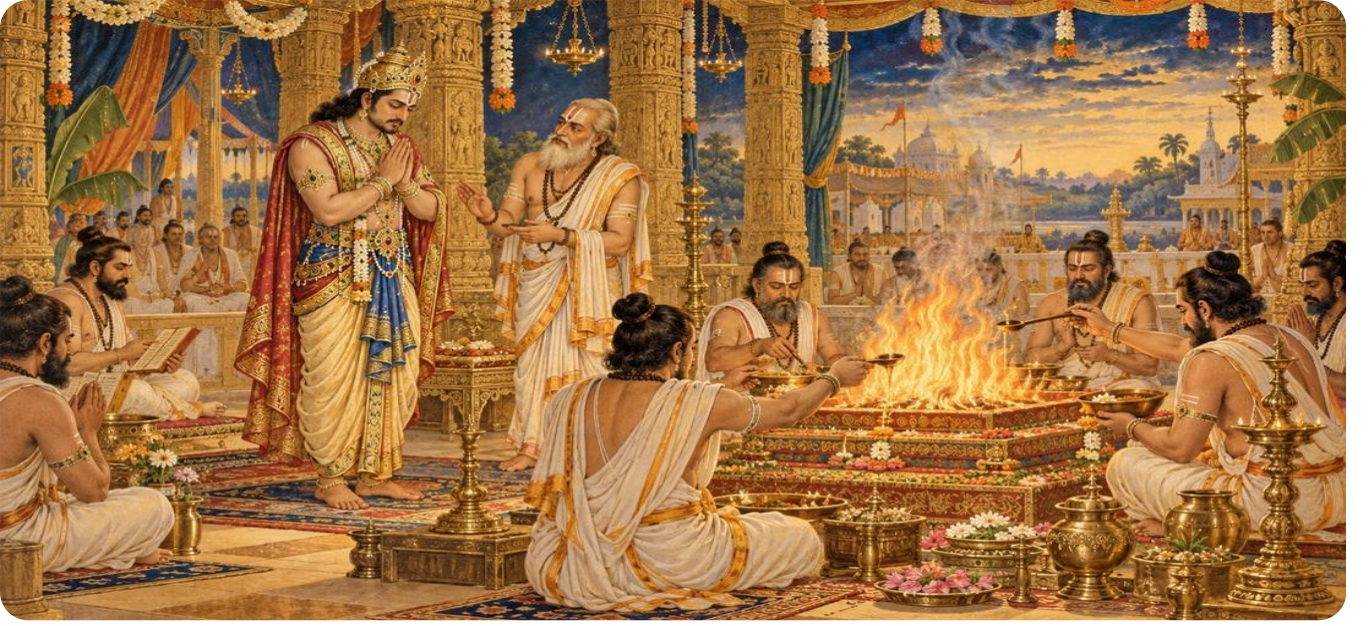
तथा स्वभागधेयानि ग्रहीष्यन्ति दिवौकसः ।

यद्यज्ञपुरुषः साक्षादपत्याय हरिवृतः ॥ ३३ ॥

tathā sva-bhāgadheyāni grahīṣyanti divaukasaḥ yad yajña-puruṣaḥ sākṣād apatyāya harir vṛtaḥ

अर्थ: ऋत्विजों ने कहा: तब देवगण स्वयं अपना भाग यज्ञ में ग्रहण करेंगे — क्योंकि साक्षात् हरि, जो समस्त यज्ञों के भोक्ता हैं, पुत्र-प्राप्ति के निमित्त यहाँ आमन्त्रित किए गए हैं। (स्कन्ध 4, अध्याय 13, श्लोक 33)

उसकी अभिलाषा से द्रवित होकर, उन्होंने पुत्र के लिए एक विशेष रीति की और राजा को पवित्र प्रसाद दिया, जो उनकी रानी सुनीथा को खिलाया जाना था। समय पर उसने एक पुत्र, वेन, को जन्म दिया। किन्तु सुनीथा स्वयं मृत्यु की पुत्री थी, और अपनी माता के वंश से बालक ने एक कठोर तथा क्रूर स्वभाव पाया।



धर्ममय किन्तु उत्तराधिकारी-रहित, राजा अंग पुत्र के लिए एक महान् यज्ञ करते हैं; जब देवगण नहीं आते, ऋत्विज उनका भाग्य प्रकट करते हैं और एक विशेष रीति करते हैं जिससे पुत्र का जन्म हो (श्लोक 22-31)।

जैसे-जैसे वेन बड़ा हुआ, उसकी क्रूरता आरम्भ में ही बिना लज्जा के प्रकट होने लगी। वह अपने खेल-साथियों तथा प्राणियों को समान रूप से सताता था, और कोई सुधार उसे कोमल न कर सका। सम्पूर्ण राज्य उस दिन से डरने लगा जब यह बालक शासन करेगा।



राजा को अन्ततः एक पुत्र होता है — बालक वेन, रानी सुनीथा का पुत्र; फिर भी अपनी माता के वंश से, जो स्वयं मृत्यु का है, एक कठोर तथा दुःखदायी स्वभाव उसमें बचपन में ही दिखता है (श्लोक 31-40)।

एक टूटे हृदय की स्वतन्त्रता

परम्परा एक गहरा कारण बताती है कि इतने समर्पित राजा को इतना कष्टदायी पुत्र क्यों मिला। राजा अंग की अपनी उदारता — उन्होंने पवित्र प्रसाद का प्रथम भाग स्वयं चखने से पहले अपनी रानी को दिया (श्लोक 37) — यह दर्शाती है कि वे कोई सामान्य कर्मकाण्डी उपासक नहीं, अपितु वह आत्मा थे जिन्हें भगवान् पहले ही अपनी ओर खींच रहे थे। ऐसे भक्त के लिए विधाता केवल प्रार्थना का उत्तर नहीं देते; वे उस स्वीकृत प्रार्थना को ही उसके बन्धन ढीले करने का साधन बना देते हैं। मृत्यु के वंश में आंशिक रूप से जन्मा पुत्र (श्लोक 39) कोई दैवी भूल नहीं थी, अपितु वह उपाय था जिससे अपने ऐश्वर्यशाली गृहस्थ जीवन से अत्यधिक आसक्त राजा को समय पर उसे सर्वथा त्यागकर केवल भगवान् की शरण लेने के लिए प्रेरित किया जाए (श्लोक 46-47)। जो एक धर्मात्मा पर पड़ी विपत्ति प्रतीत होती है, वह ठीक से देखने पर भगवान् के अपने हाथों द्वारा भक्त की विरक्ति को पूर्ण करना है।

सज्जन राजा ने अपने पुत्र को मार्ग दिखाने के हर उपाय किए, और हर उपाय विफल हुआ। अन्ततः थककर, अंग एक विचित्र तथा खोजपूर्ण शोक में गिर पड़े, और उससे एक अप्रत्याशित विचार उठा: कि एक दुष्ट पुत्र, एक अर्थ में, एक सज्जन पुत्र से बेहतर है — क्योंकि सज्जन पुत्र हृदय को घर से और भी कसकर बाँधता है, जबकि दुष्ट पुत्र मनुष्य को उस अनन्त कष्ट के घर से तब तक थका देता है जब तक वह उससे मुक्त होने को न तरसे।

कदपत्यं वरं मन्ये सदपत्याच्छुचां पदात् ।

निर्विद्येत गृहान्मर्त्यो यत्क्लेशनिवहा गृहाः ॥ ४६ ॥

kad-apatyaṁ varaṁ manye sad-apatyāc chucāṁ padāt nirvidyeta gṛhān martyo yat-kleśa-nivahā gṛhāḥ

अर्थ: (अंग ने विचार किया:) दुष्ट पुत्र, मैं मानता हूँ, सज्जन पुत्र से बेहतर है; क्योंकि सज्जन पुत्र हृदय को घर से बाँधता है, जबकि दुष्ट पुत्र से मनुष्य उस अनन्त कष्ट के आवास से थककर विमुख हो जाता है। (स्कन्ध 4, अध्याय 13, श्लोक 46)

अब उनका मन हर आसक्ति से खाली था, और निद्रा उनसे दूर जा चुकी थी; राजा गहन रात्रि में शय्या त्यागकर उठ बैठे। बिना किसी की दृष्टि में आए, वे अपने ऐश्वर्य-सम्पन्न भवन से बाहर निकल गए, वेन की माता को निद्रामग्न छोड़कर, और सन्यास की ओर चल पड़े।

एवं स निर्विण्णमना नृपो गृहा-

न्निशीथ उत्थाय महोदयोदयात् ।

अलब्धनिद्रोऽनुपलक्षितो नृभि-

र्हित्वा गतो वेनसुवं प्रसुप्ताम् ॥ ४७ ॥

evaṁ sa nirviṇṇa-manā nṛpo gṛhān niśītha utthāya mahodayodayāt alabdha-nidro 'nupalakṣito nṛbhir hitvā gato vena-suvaṁ prasuptām

अर्थ: इस प्रकार, अपना मन आसक्ति से रिक्त तथा निद्रा लुप्त, राजा मध्यरात्रि में उठे और, किसी के द्वारा बिना देखे, अपना ऐश्वर्यशाली महल छोड़ा, वेन की सोती हुई माता को भी छोड़ते हुए, और चले गए। (स्कन्ध 4, अध्याय 13, श्लोक 47)

प्रजा को खोज

जब यह ज्ञात हुआ कि उनके राजा सब कुछ त्यागकर चले गए हैं, प्रजा — ऋत्विज, मन्त्री, मित्र, तथा नागरिक सब — शोक से अभिभूत होकर उन्हें सम्पूर्ण पृथ्वी पर खोजने लगे, किन्तु व्यर्थ, जैसे अकुशल साधक भीतर छिपे आत्मा को खोजते हैं और नहीं पाते।

विज्ञाय निर्विद्य गतं पतिं प्रजाः

पुरोहितामात्यसुहृद्गणादयः ।

विचिक्युरुर्व्यामतिशोककातरा

यथा निगूढं पुरुषं कुयोगिनः ॥ ४८ ॥

viññāya nirvidya gataṁ patiṁ prajāḥ purohitāmātya-suhṛd-gaṇādayaḥ vicikyur urvyām atisoka-kātarā yathā nigūḍhaṁ puruṣaṁ kuyogināḥ

अर्थ: यह जानकर कि उनके राजा विरक्ति में चले गए हैं, प्रजा — ऋत्विज, मन्त्री, मित्र, तथा सब — उन्हें सम्पूर्ण पृथ्वी पर गहन शोक में खोजने लगे, जैसे अकुशल योगी भीतर छिपे आत्मा को व्यर्थ खोजते हैं। (स्कन्ध 4, अध्याय 13, श्लोक 48)



रात्रि में अपने प्रिय राजा को गया पाकर, शोकाकुल प्रजा उन्हें सम्पूर्ण पृथ्वी पर खोजती है किन्तु नहीं पाती, जैसे अकुशल साधक छिपे आत्मा को व्यर्थ खोजते हैं (श्लोक 48-49)।

इस प्रकार त्रयोदश अध्याय एक रिक्त सिंहासन तथा एक खोजती प्रजा पर समाप्त होता है — साधु अंग वन में लुप्त, और दुष्ट वेन एकमात्र उत्तराधिकारी शेष, उस अन्धकारमय कथा की भूमिका रचते हुए जो अगला अध्याय कहेगा।

इस अध्याय को प्रमुख शिक्षाएँ

1. भगवान् के भक्तों को सुनना भक्ति गहरी करता है। ध्रुव के विषय में जितना अधिक विदुर सुनते हैं, उनका भगवान् के प्रति प्रेम उतना बढ़ता है। पावन कथाएँ मात्र इतिहास नहीं; वे उसी भक्ति को प्रज्वलित करती हैं जिसका वे वर्णन करती हैं (श्लोक 1)।
2. धर्ममय जीवन भी शोक से नहीं बचता। अंग निर्दोष हैं, फिर भी उन्हें एक हृदय-विदारक पुत्र मिलता है। शास्त्र इस सरल विचार को अस्वीकार करता है कि सज्जनता सदा सुख लाती है; वह हमें एक पवित्र जीवन के भीतर शोक दिखाता है (श्लोक 21)।
3. भगवान्, न कि देवगण, ही प्रत्येक अर्पण के वास्तविक लक्ष्य हैं। केवल हरि ही किसी भी यज्ञ के वास्तविक भोक्ता हैं; देवगण उसमें भाग तभी पाते हैं जब वे उनके साथ आते हैं। ऋत्विज अंग को सिखाते हैं कि आत्मा की उपासना का फल इस पर निर्भर करता है कि वह वास्तव में किस तक पहुँचती है (श्लोक 32-34)।
4. स्वभाव गुप्त मार्गों से भी संचरित हो सकता है। वेन की क्रूरता उसकी माता के वंश, मृत्यु के वंश, तक जाती है। हम जितना देखते हैं उससे अधिक द्वारा गढ़े जाते हैं, और कोई पालन-पोषण अकेला हृदय की गारंटी नहीं दे सकता (श्लोक 39-40)।
5. जो हमें बाँधता है और जो हमें मुक्त करता है, वह सदा वही नहीं जो हम अपेक्षा करते हैं। अंग की उदारता से प्राप्त वही वरदान (श्लोक 37) स्वीकृत होने पर उनकी विरक्ति का द्वार बन जाता है (श्लोक 46) — कभी-कभी हमारा सबसे भारी बोझ ही हमें अन्ततः छोड़ना सिखाता है।
6. जो केवल भगवान् दे सकते हैं, उसे संसार लौटा नहीं सकता। प्रजा अपने लुप्त राजा को सम्पूर्ण पृथ्वी पर खोजती है और नहीं पाती — उस आत्मा का चित्र जो अपनी शान्ति सर्वत्र खोजती है सिवाय भीतर के। जो हमें सबसे अधिक चाहिए वह बाहर खोजने से नहीं मिलता (श्लोक 48)।

एक भक्तिपूर्ण चिन्तन

राजा अंग की कथा में एक शान्त, विचलित करने वाली सच्चाई है। वे सब कुछ ठीक करते हैं — वे न्यायी, भक्त, संयमी, प्रिय हैं — और फिर भी उनका जीवन उन्हें एक ऐसा शोक देता है जिसे वे ठीक नहीं कर सकते। हम विश्वास करना चाहते हैं कि सज्जनता सदा शान्ति से पुरस्कृत होती है, कि एक धर्ममय व्यक्ति गहनतम शोकों से बच जाएगा। भागवत हमें उस कल्पना से सान्त्वना नहीं देता। इसके स्थान पर वह एक पवित्र राजा को एक ऐसे घाव से टूटता दिखाता है जिसे कोई सद्गुण रोक न सका, और फिर, आश्चर्यजनक रूप से, वह उसी घाव को उनकी मुक्ति बनने देता है। अंग का विचित्र निष्कर्ष — कि एक दुष्ट पुत्र एक सज्जन पुत्र से बेहतर हो सकता है — कटुता नहीं है; यह विरक्ति का उदय है, यह पहचान कि जिन वस्तुओं को हम अपनी सुरक्षा मानकर पकड़ते हैं, वे वास्तव में “अनन्त कष्ट का आवास” हैं। हममें से अधिकांश अपनी आसक्तियों से धीरे तथा कोमलता से मुक्त होते हैं। कुछ एक ऐसे शोक से मुक्त होते हैं जो भरता नहीं, जो संसार पर हमारी पकड़ को ढीला कर देता है जब कुछ कोमल न कर सका। अध्याय अंग की पीड़ा का महिमामण्डन नहीं करता, किन्तु वह कुछ अधिक साहसी करता है: वह दिखाता है कि एक हृदयभंग भी, अर्पित किया जाए तो, एक ऐसा मार्ग बन सकता है जो एक आत्मा को संसार से दूर और भगवान् की ओर ले जाता है।

एक दैनिक भाक्ते-अभ्यास

आज, उस एक आसक्ति या चिन्ता को सच्चाई से देखें जो आप पर सबसे अधिक भारी है — वही वस्तु जिसे आप खोना सबसे कम चाहेंगे, या वह कष्ट जिसे आप ठीक नहीं कर सकते — और उसे पकड़ने या उससे भागने के बजाय, उसे इन शब्दों के साथ शान्ति से भगवान् को अर्पित करें — “ॐ नमो भगवते वासुदेवाय”। जैसे अंग ने पाया कि उनका सबसे भारी शोक संसार पर उनकी पकड़ ढीली कर सकता है, यह प्रार्थना करें कि जो कुछ आप बहुत कसकर पकड़े हैं, वह भगवान् के हाथों में आपके हृदय को उनकी ओर मोड़ने का साधन बन जाए। और जब आप स्वयं को बाहर एक ऐसी शान्ति खोजते पाएँ जो नहीं मिलती — जैसे अंग की प्रजा ने अपने लुप्त राजा को पृथ्वी पर खोजा — तो कोमलता से खोज को भीतर मोड़ें, यह स्मरण करते हुए कि जिस आश्रय को आप खोजते हैं वह आपकी समस्त खोज से निकट है, आपके अपने हृदय में ही विराजमान।

उपसंहार

चतुर्थ स्कन्ध का त्रयोदश अध्याय ध्रुव की महिमा से एक कोमल, अधिक दुःखद कथा की ओर मुड़ता है। ध्रुव के प्रस्थान को सुनकर प्रेम गहरा होकर, विदुर मैत्रेय से वंश की कथा जारी रखने को कहते हैं, और ऋषि ध्रुव के वंशजों को साधु राजा अंग तक अनुगमन करते हैं। धर्ममय किन्तु उत्तराधिकारी-रहित, अंग पुत्र के लिए एक यज्ञ करते हैं और उन्हें वेन मिलता है — किन्तु वह बालक, अपनी माता के वंश, मृत्यु के वंश, से एक क्रूर स्वभाव पाकर, इतना दुष्ट होता है कि कोई सुधार उस तक नहीं पहुँच सकता। अन्ततः थककर, अंग को अपने ही शोक में एक अप्रत्याशित स्वतन्त्रता मिलती है — जब घर ही क्लेश का घर बन जाए तो हृदय उससे बँधा नहीं रहता — और गहन रात्रि में वे उठकर विरक्ति में चुपचाप निकल जाते हैं, बिना देखे। उनकी प्रजा उन्हें सम्पूर्ण पृथ्वी पर व्यर्थ खोजती है। इस प्रकार अध्याय एक रिक्त सिंहासन पर समाप्त होता है, दुष्ट वेन एकमात्र उत्तराधिकारी — और अगले अध्याय के अन्धकार की चेतावनी के साथ।

श्रीमद्भागवतम् का दिव्य ज्ञान हमारे हृदयों में शुद्ध भक्ति को जागृत करे।

ॐ नमो भगवते वासुदेवाय।

जय श्री माधव।

सन्दर्भ तथा आभार

- मूल संस्करण: गीता प्रेस, श्रीमद्भागवत महापुराण (अंग्रेज़ी, पूर्ण), चतुर्थ स्कन्ध, त्रयोदश अध्याय।
- श्रृंखला: श्रीमद्भागवतम् विज़डम • विश्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट।
- पण्डित डॉ. श्री काशीनाथ मिश्र के आध्यात्मिक मार्गदर्शन तथा अनुशंसा के अनुसार प्रस्तुत।

यह लेखक के अपने शब्दों में एक मौलिक, निष्ठावान् पुनर्कथन है, जिसमें संक्षिप्त उद्धृत श्लोक देवनागरी तथा लिप्यन्तरण में दिखाए गए हैं और उनके अर्थ सारांश के रूप में दिए गए हैं। यह किसी एक प्रकाशक के निरन्तर अनुवाद या टीका का पुनरुत्पादन नहीं है। किसी भी प्रकाशक द्वारा किसी सम्बद्धता या समर्थन का दावा नहीं किया गया है।

॥ हरि ॐ तत्सत् ॥

जय श्री माधव

ऑनलाइन पढ़ें: kalkiabatara.org/hi/blog-srimad-bhagavatam-canto-4-chapter-13-dhruvas-posterity-and-king-anga-hi.html

श्रीमद्भागवतम् विज्ञम • कल्कि अवतार इंटरनेशनल • बिस्व सनातन धर्म सेवा ट्रस्ट

